हमारे पूर्वजों को खुशी देना

दाजी

पूज्य श्री लालाजी महाराज

के 153वें जन्मोत्सव के अवसर पर 22, 23 और 24 जनवरी 2026 को
कान्हा शान्तिवनम् में दिया गया संदेश।

हमारे पूर्वजों को खुशी देना

प्रियजनों,

हर वर्ष जब बसंत पंचमी आती है तब मेरे हृदय में कुछ ऐसा होता है जिसे मैं पूरी तरह व्यक्त नहीं कर सकता। वे पीले फूल, हवा में लौटती हल्की गर्मी और बसंत के खिलते फूल, ये सब नवीनीकरण की बात करते हैं। लेकिन हम सभी जो इस मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं,उनके लिए यह दिन एक ऐसी सुगंध लेकर आता है जो इस ऋतु से परे है क्योंकि इसी दिन दिव्य प्रकाश ने पृथ्वी पर अवतरित होने का चयन किया था।

2 फ़रवरी 1873 को एक विशिष्ट विभूति का जन्म हुआ जो हमेशा के लिए लोगों के आध्यात्मिक अनुभव का स्वरूप बदलने वाले थे। उस समय, संसार इस विभूति के बारे में अनभिज्ञ था। वह भला कैसे जान सकता था? महान आत्माएँ बिना किसी धूमधाम के, साधारण व्यक्ति का रूप लेकर चुपचाप आती हैं। लेकिन प्रकृति जानती थी और उसी दिन प्रकृति ने मानवजाति को एक मूक वचन दिया।

उस बालक की माता एक धार्मिक स्वभाव की महिला थीं जिनका हृदय भक्ति से ओतप्रोत था। एक बार उनके द्वार पर कोई अवधूत भोजन की इच्छा से आए।

अवधूत ने भोजन में मछली माँगी, लेकिन उनके पास मछली नहीं थी क्योंकि वे न तो मांस पकाती थीं और न ही खाती थीं। ईश्वर की कृपा से घर की दासी बड़ी सजग थी। वह पड़ोसी के घर गई और संत के लिए दो मछलियाँ ले आई। भोजन करने के बाद संत ने उनसे पूछा, "तुम्हें क्या कष्ट है?" वे मौन रहीं लेकिन दासी ने उत्तर दिया, "मेरी पुण्यशीला मालकिन के पास संतान के सिवा सब कुछ है।"

संत ने गहरे नीले आकाश के पार देखते हुए कहा, "ओह!" कुछ क्षणों बाद उनके मुख पर तेज फैल गया। उन्होंने आकाश की ओर उँगलियाँ उठाईं और बोले, "एक... दो... एक... दो...", और वहाँ से चले गए। उस दिन के बाद वे फिर कभी दिखाई नहीं दिए।

अगले वर्ष, बसंत पंचमी 1873 के दिन उनके यहाँ प्रथम पुत्र का जन्म हुआ। वे फ़तेहगढ़ के रामचन्द्र थे जिन्हें लालाजी के नाम से भी जाना जाता है।

मैं इस विशेष विभूति के विषय में और क्या कहूँ, जो पहले नहीं कहा जा चुका हो? कवियों ने प्रयास किया है, शास्त्र ऐसे महापुरुषों की ओर संकेत करते हैं और टेनीसन की लिखी ये पंक्तियाँ मानो केवल उन्हीं के लिए कही गई हों–

तुम मानवीय भी प्रतीत होते हो और दिव्य भी,
तुम सर्वोच्च और सर्वाधिक पवित्र पुरुष हो।

जब वे अभी युवावस्था में ही थे तब केवल सात महीनों की अवधि में उन्होंने वह प्राप्त कर लिया जिसे अनेक लोग अनगिनत जन्मों में भी प्राप्त नहीं कर पाते। दिव्य प्रकाश उनके लिए कोई दूर का लक्ष्य नहीं था जिसे पाना हो; वह स्वाभाविक रूप से उनमें उपस्थित था। उन्होंने उसे खोजा नहीं बल्कि वे स्वयं वही थे।

लालाजी के माध्यम से मानवजाति के लिए एक विस्मृत धरोहर को पुनः प्रचलित किया गया – प्राणाहुति का पवित्र विज्ञान जिसे 'प्राणस्य प्राणः,' जो

जीवन का मूल तत्त्व है, का संचार भी कहा जाता है। यह गूढ़ ज्ञान सर्वप्रथम अयोध्या के भगवान श्रीरामचंद्रजी से तिहत्तर पीढ़ी पूर्व, पूज्य श्री ऋषभदेवजी महाराज द्वारा प्रतिपादित किया गया था जिन्होंने जीवन के मूल सत्त्व के संचार की इस सूक्ष्म विद्या को उजागर किया था।

दैवीय प्राणाहुति के माध्यम से चेतना के उच्चतर आयामों के द्वार खुल जाते हैं। साधक ब्रह्मविद्या की प्राप्ति करते हैं, जीवन से विरक्त होकर संन्यास लेकर नहीं बल्कि सामंजस्यपूर्ण एकीकरण से – संसार में पूर्ण रूप से रहते हुए भी भीतर से परम सत्ता से जुड़े रहकर एक गृहस्थ के रूप में अपने भौतिक व आध्यात्मिक कर्तव्यों का पालन करना। दिव्य प्राणाहुति की यह जीवंत धारा अकसर बहुत ही कम समय में निष्ठापूर्ण दैनिक अभ्यास के माध्यम से साधक को शीघ्र ही समाधि की अवस्थाओं तक पहुँचा देती है।

फिर भी, मानव इतिहास के क्रम में यह अमूल्य विद्या धीरे-धीरे मानवीय जागरूकता से लुप्त होती चली गई और अंततः खो गई। यह तब तक सुप्त रही जब तक भाग्य ने हस्तक्षेप नहीं किया और लालाजी महाराज ने इस पवित्र प्रवाह को पुनः खोजा व पुनर्जीवित किया। ऐसा करके उन्होंने मानवजाति को परमतत्त्व तक पहुँचने का एक जीवंत और प्रत्यक्ष मार्ग पुनः प्रदान किया। यही लालाजी का उपहार था – केवल दर्शन और शिक्षा ही नहीं बल्कि हृदय से हृदय तक आध्यात्मिक सत्त्व का वास्तविक सम्प्रेषण।

और फिर शिष्य का आगमन हुआ।

दैवीय प्राणाहुति के माध्यम से चेतना के उच्चतर आयामों के द्वार खुल जाते हैं। साधक ब्रह्मविद्या की प्राप्ति करते हैं, जीवन से विरक्त होकर संन्यास लेकर नहीं बल्कि सामंजस्यपूर्ण एकीकरण से – संसार में पूर्ण रूप से रहते हुए भी भीतर से परम सत्ता से जुड़े रहकर एक गृहस्थ के रूप में अपने भौतिक व आध्यात्मिक कर्तव्यों का पालन करना।

शाहजहाँपुर में, रामचन्द्र (बाबूजी) नामक एक युवक ने फ़तेहगढ़ के उस संत के विषय में सुना। लालाजी का नाम मात्र सुनते ही उसके भीतर कुछ जाग उठा और वह उनसे मिलने चल पड़ा। 3 जून 1922 को हुई उस प्रथम भेंट में उसका जीवन सदा के लिए परिवर्तित हो गया।

उन्होंने बाद में लिखा, "जब मैं पहली बार अपने गुरु के पास पहुँचा तब मैंने मन की ऐसी अवस्था का अनुभव किया, जिसकी कोई उपमा नहीं है। अपने जीवन के उस क्षण में जिस हर्षावेश का मैंने अनुभव किया उसका ठीक-ठीक वर्णन मैं शब्दों में नहीं कर सकता। उसी दिन से मेरा नया जीवन आरम्भ हुआ। सब कुछ बदला-सा लगने लगा। संसार मुझे भिन्न रूप में दिखाई देने लगा।"

इस प्रकार एक ऐसी प्रेमकथा आरम्भ हुई जो आध्यात्मिक इतिहास की सभी कथाओं से बढ़कर थी। मैं ये शब्द हल्के में नहीं कह रहा हूँ क्योंकि लालाजी और उनके शिष्य के बीच जो घटित हुआ वह साधारण भक्ति नहीं थी। वह गुरु के प्रति शिष्य की श्रद्धा से कहीं अधिक था। वह ऐसा अनुभव था जिसके लिए शब्द कम पड़ जाते हैं। उसे देखकर देवतागण भी विस्मय में ठहर गए थे।

बाबूजी ने एक बार लालाजी के साथ अपने सम्बन्ध के बारे में कहा था, "हम पूर्णतः एक-दूसरे में रचे-बसे थे, आध्यात्मिक रूप से पूरी तरह ऐक्य में, हमारे हृदय मानो एक ही थे। प्रियतम के लिए इससे अत्यधिक सुंदर कुछ भी नहीं होता। ऐसा प्रेम मनुष्य को अधिकतम प्रयास करने की प्रेरणा देता है ताकि उसे संतुष्ट करने के लिए हर सम्भव प्रयास किया जा सके।"

अन्यत्र उन्होंने स्वीकार किया कि वे एक क्षण के लिए भी लालाजी के बिना अस्तित्व में नहीं रह सकते थे। उनका संकेत लालाजी के शारीरिक रूप की

मैं ये शब्द हल्के में नहीं कह रहा हूँ क्योंकि लालाजी और उनके शिष्य के बीच जो घटित हुआ वह साधारण भक्ति नहीं थी। वह गुरु के प्रति शिष्य की श्रद्धा से कहीं अधिक था। वह ऐसा अनुभव था जिसके लिए शब्द कम पड़ जाते हैं। उसे देखकर देवतागण भी विस्मय में ठहर गए थे।

ओर नहीं था जो दशकों पहले शरीर त्याग चुके थे, बल्कि उन लालाजी की ओर था जो उनकी साँसों की साँस, प्राणों के भी प्राण – प्राणस्य प्राणः बन चुके थे।

मैं एक ऐसी बात साझा करना चाहता हूँ, जिसे पढ़ते ही मेरी आँखों में आँसू आ जाते हैं।

लालाजी के श्रुतलेखों में बाबूजी के विषय में एक कथन है, जो हमें विस्मय से निःशब्द कर देता है। लालाजी ने कहा कि बाबूजी ने अपनी पत्नी के साथ जीवन के अत्यंत पवित्र क्षणों में भी, एक साँस के लिए भी, अपने गुरु को हृदय से कभी दूर नहीं किया। अपने सांसारिक जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में गुरु से उनका सम्बन्ध अटूट बना रहा।

यही ब्रह्मचर्य का वास्तविक अर्थ है – सांसारिक जीवन का त्याग नहीं, बल्कि उसी जीवन में सतत स्मरण की उपस्थिति। बाबूजी भले ही शारीरिक रूप से संसार में कार्यरत रहे लेकिन उनकी चेतना सदा उच्चतर तत्त्व में स्थित रही।

कौन-सा प्रेम इस प्रकार का स्मरण बनाए रख सकता है? कौन-सी भक्ति इतनी स्थिरता धारण कर सकती है?

अब मैं आपको एक अत्यंत विलक्षण बात बताता हूँ।

21 मार्च 1945 को *विस्पर्स फ्रॉम द ब्राइटर वर्ल्ड* में दर्ज अंतःसंचार में एक ऐसा संवाद मिलता है जिसे स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जाना चाहिए। पहले आत्माओं के बीच दिग्गज स्वामी विवेकानन्द ने बाबूजी के प्रति लालाजी के प्रेम के बारे में कहा और उसके बाद भगवान श्रीकृष्ण ने लालाजी के प्रति बाबूजी के प्रेम के बारे में कहा।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा, "हमारे प्रभु (लालाजी) ने तुम्हारे प्रति अपने प्रेम के विषय में जो कुछ कहा है, वह पूर्णतः सत्य है। वे तुम्हारे प्रेम में दग्ध हैं। अपने सम्पूर्ण जीवन में मैंने ऐसा उदाहरण कहीं नहीं देखा।" फिर उन्होंने कहा,

“लोग ईश्वर के लिए घर छोड़ देते हैं; उन्होंने तुम्हारे लिए अपना घर छोड़ दिया। यह एक मुक्त आत्मा से अपेक्षित सबसे महान त्याग है।” यह सुनकर लालाजी ने बीच में ही बाबूजी से कहा कि वे इस संवाद को अपनी डायरी में न लिखें।

मुक्त गुरु लालाजी ने अपने शिष्य बाबूजी के लिए अपने भण्डार, अपने दिव्य लोक को छोड़ दिया था। गुरु ने शिष्य के लिए पृथ्वी पर अवतरण किया, स्वर्ग पृथ्वी की ओर झुक गया।

और फिर भगवान श्रीकृष्ण बोले और आज भी उनके शब्दों को लिखते समय मेरे हाथ काँपने लगते हैं – “स्वामी विवेकानन्द ने जो कहा, वह शब्दशः सही है और इसे लिखने में कोई हानि नहीं है कि प्रेम के मामले में तुमने राधा को भी पीछे छोड़ दिया है। राधा का प्रेम अब तुम्हारे प्रेम के सामने दूसरे स्थान पर है।”

क्या आप इसका अर्थ समझते हैं? श्रीकृष्ण के प्रति राधा का प्रेम सदियों से भक्ति का सर्वोच्च उदाहरण माना जाता रहा है। राधा का नाम ही दिव्य प्रेम का पर्याय बन गया है और फिर भी भगवान कृष्ण कहते हैं कि बाबूजी का लालाजी के प्रति प्रेम राधा के प्रेम से भी ऊपर था।

लेकिन यह कहानी यहीं समाप्त नहीं होती। तीन दिन बाद, यह ऐसे चरम पर पहुँचती है जो पूरी सृष्टि में पहले कभी नहीं देखा गया।

24 मार्च 1945 के शुभ दिवस, लालाजी ने बाबूजी को सीधे परम सत्ता से दीक्षा दिलाने का प्रबंध किया। इसे देखकर भगवान श्रीकृष्ण ने कहा, “यह अत्यंत शुभ दिवस है कि तुम्हारे पूज्य गुरु ने तुम्हें प्रत्यक्ष रूप से परम सत्ता द्वारा दीक्षा दिलाई। यही सच्ची दीक्षा कहलाती है। सृष्टि के आरम्भ से इस प्रकार का यह प्रथम उदाहरण है।”

स्वामी विवेकानन्द ने इसमें अपनी बात जोड़ी, "तुम्हें प्रत्यक्ष रूप से परम सत्ता से दीक्षा मिलने की खबर सुनकर मैं अत्यंत आनंदित हूँ। संसार के आरम्भ से लेकर अब तक का यह पहला उदाहरण है।"

अब थोड़ा रुकें और उस तथ्य पर विचार करें जो मेरे हृदय को आश्चर्य से द्रवित कर देता है।

इस सर्वोच्च घटना के बाद, लालाजी का एक गम्भीर कथन था जो उनके निःस्वार्थ भाव की गहराई को प्रकट करता है। उन्होंने कहा, "प्रत्यक्ष दीक्षा पूरी तरह मेरी विधि है। यह पहले कभी किसी की समझ में नहीं आई थी और न ही इसे कभी व्यवहार में लाया गया।"

क्या आप इसका अर्थ समझते हैं? लालाजी इस विधि को जानते थे क्योंकि यह उनकी अपनी खोज थी। अपने जीवनकाल में उन्होंने वह समझ प्राप्त की थी, जिसे उनके पूर्व कोई आत्मा कभी प्राप्त नहीं कर सकी – परम सत्ता द्वारा प्रत्यक्ष दीक्षा की सम्भावना। वे इसे अपने लिए उपयोग कर सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने इस सर्वोच्च रहस्य को अपने भीतर रखा, अपने प्रिय शिष्य के उस अवस्था तक पहुँचने की प्रतीक्षा की जहाँ यह उपहार ग्रहण किया जा सकता था। और जब बाबूजी उस उच्च दशा तक पहुँच गए तब लालाजी ने यह विधि अपने शिष्य के लिए प्रयुक्त की।

गुरु ने शिष्य को सर्वोपरि रखकर उसे वह प्रदान किया जो उन्होंने स्वयं कभी ग्रहण नहीं किया था। ऐसा प्रेम तर्क से परे है – माता-पिता द्वारा अपनी संतान

इस सर्वोच्च घटना के बाद, लालाजी का एक गम्भीर कथन था जो उनके निःस्वार्थ भाव की गहराई को प्रकट करता है। उन्होंने कहा, "प्रत्यक्ष दीक्षा पूरी तरह मेरी विधि है। यह पहले कभी किसी की समझ में नहीं आई थी और न ही इसे कभी व्यवहार में लाया गया।"

के लिए किए त्याग से भी अधिक, या किसी प्रेमी के अपने प्रियतम पर सब कुछ न्यौछावर कर देने से भी अधिक। यहाँ गुरु ने महानतम आध्यात्मिक उपहार खोजा और उसे अपने शिष्य को दे दिया। वे स्वयं पृष्ठभूमि में बने रहने में संतुष्ट थे, अपने शिष्य को अध्यात्म की उन ऊँचाइयों पर पहुँचते देखकर संतुष्ट थे, जिन्हें उन्होंने अपने लिए कभी नहीं चाहा।

और इस सर्वोच्च उपहार को देने के बाद, लालाजी ने अपने बारे में क्या कहा? उन्होंने एक फ़ारसी शेर का उल्लेख किया – "शाह महमूद गज़नवी, जो हज़ारों दासों का मालिक था, वह इतनी निर्धनता में आ गया कि वह स्वयं दास का भी दास बन गया।" और फिर लालाजी ने सरलता से अपनी बात कही, "यही मेरी अवस्था है।"

गुरुदेवों के गुरु, वह विशेष विभूति जिन्होंने जो खो गया था उसे पुनः प्राप्त किया, जिनके माध्यम से प्राणाहुति सम्पूर्ण मानवजाति को प्रवाहित होती है, उन्होंने स्वयं को "दास का दास" कहा, क्योंकि उन्होंने अपने शिष्य को अपने से भी महान कुछ दिया।

यहाँ हम उस गुरु के अलौकिक प्रेम के साक्षी हैं, जिन्होंने स्वयं को सर्वोच्च फल से वंचित रखा ताकि उनका शिष्य उसका पहले अनुभव कर सके। उनका हृदय इतना विशाल था कि जब उन्होंने सृष्टि का सबसे महान रहस्य खोजा, उन्होंने उसे किसी और को दे दिया। लेकिन इसे केवल त्याग कहना एक समर्थ गुरु के हृदय की गहराई को न समझने के समान होगा। यह उपहार देना अपने आप में लालाजी के लिए अत्यधिक आनंद का स्रोत था।

वास्तव में, यह गुरु के लिए सबसे बड़ा आनंद है – अपने शिष्य को स्वयं से आगे बढ़ते देखना, प्रिय को ऊँचाइयों पर उठते देखना, उसे सब कुछ देना और फिर भी बदले में परिपूर्णता महसूस करना। जब माँ अपने बालक को भोजन देती है तब वह त्याग नहीं करती, नदी जब सागर में मिलती हैं तब वह भी त्याग नहीं करती। लालाजी के लिए, बाबूजी को परमतत्त्व से प्रत्यक्ष दीक्षा प्राप्त करने वाला पहला मानव बनाना, एक पूर्णता और आनंद का स्रोत दोनों था।

वास्तव में, यह गुरु के लिए सबसे बड़ा आनंद है – अपने शिष्य को स्वयं से आगे बढ़ते देखना, प्रिय को ऊँचाइयों पर उठते देखना, उसे सब कुछ देना और फिर भी बदले में परिपूर्णता महसूस करना।

यही प्रेम है। यही मार्ग है। यही हम बसंत पंचमी पर मनाते हैं।

लालाजी ने एक बार इस वर्तमान युग के विषय में कहा था, "यह समय अब बहुत लंबे समय तक फिर नहीं आएगा। इस विशेष समय के लिए यह कहावत सटीक बैठती है – 'मजनूँ ने जंगल को अपना घर बना लिया लेकिन मैंने अपने घर को जंगल बना दिया।'" वह प्रसिद्ध प्रेमी मजनूँ प्रेम में पागल होकर समाज को छोड़ जंगल में भटकने के लिए चला गया। इसके विपरीत, महान गुरु लालाजी ने अपने शिष्य के लिए अपने स्वर्ग जैसे घर को दिव्य के लिए तड़प के एक विरान जंगल में बदल दिया।

भगवान श्रीकृष्ण ने बाबूजी की योग्यता को अनुत्तर यानी सर्वोच्च श्रेणी कहकर वर्णित किया। उन्होंने कहा, "ऐसी योग्यता कभी-कभी अचानक सालों, सदियों, हज़ारों सालों के बाद प्रकट होती है, जिसकी कोई उपमा नहीं है। ऐसा योग्य व्यक्ति ईश्वर के आदेश से जन्म लेता है। तुम इसका उदाहरण हो।"

जब सन् 1931 में लालाजी ने अपने शरीर को त्याग दिया तब बाबूजी ने लिखा, "सच कहूँ तो मेरे गुरु की मृत्यु नहीं हुई बल्कि मुझे ऐसा लगा कि मैं ही मृत हूँ।" उसके बाद कई वर्षों तक उनकी डायरी लगभग मौन रही। जो सृजनशील शिष्य लालाजी के जीवनकाल में इतना कुछ लिखते रहे, वे एक सुप्त अवस्था में चले गए; उस अंधकार में कुछ अंकुरित होना बाकी था।

और फिर, सन् 1944 में उनका अंतःसंचार पुनः स्थापित हुआ। ऐसा लग रहा था कि जिस सम्बन्ध को शारीरिक मृत्यु ने समाप्त कर दिया है, वह समाप्त नहीं हुआ था बल्कि उसका केवल रूप बदल चुका था। लालाजी उन्हें अपना

मार्गदर्शन, प्राणाहुति और प्रेम निरंतर देते रहे। वह सम्बन्ध मृत्यु से परे था, वह प्रेम देह से परे था और प्राणाहुति का प्रवाह अब भी जारी है।

मैं यह सब बसंत पंचमी पर क्यों बता रहा हूँ? ताकि आप समझ सकें कि आपको किस अनमोल अनुभव तक पहुँच दी गई है।

जब आप ध्यान के लिए बैठते हैं और अपने हृदय में कोमलता से कुछ घटित होता हुआ महसूस करते हैं तब आप उसी प्रवाह को स्पर्श कर रहे हैं जो लालाजी और बाबूजी के बीच प्रवाहित होता था। जब आप प्रणाहुति ग्रहण करते हैं तब आप वह अनमोल उपहार ग्रहण कर रहे हैं, जो अनगिनत पीढ़ियों तक खो जाने के बाद मानवजाति के लिए पुनः प्राप्त हुआ है। जब आप उस अवर्णनीय तड़प को महसूस करते हैं, जिसे आप नाम नहीं दे सकते तब आप उस प्रेम की प्रतिध्वनि को महसूस कर रहे हैं, जिसने राधा के प्रेम को भी पार कर लिया है।

यह हमारी विरासत है, हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह हमारे लिए उपलब्ध है क्योंकि सन् 1873 के बसंत पंचमी के दिवस एक बालक ने जन्म लिया जो आगे चलकर एक गुरु बना और क्योंकि एक शिष्य ने उस गुरु से ऐसा प्रेम किया जो सृष्टि के आरम्भ से अब तक अप्रतिम रहा।

बसंत के फूल खिलते हैं, संसार अपने आप को नया बना लेता है और जैसे-जैसे प्राणाहुति अपना कार्य करती रहती है वैसे-वैसे जो लोग अभ्यास करते हैं उनके हृदयों में भी वही नवीनीकरण चुपचाप, दिन-प्रतिदिन होता रहता है।

इस बसंत पंचमी पर, मैं पूज्य श्री लालाजी महाराज के पवित्र चरणों में नमन करता हूँ – वह विशेष विभूति जिन्होंने यह सब सम्भव बनाया। मैं पूज्य श्री बाबूजी महाराज के चरणों में नमन करता हूँ जिनके प्रेम ने ऐसा द्वार खोला जिसे कभी बंद नहीं किया जा सकता।

हम इस विरासत के वारिस हैं। कितना अद्‌भुत वंश है! हमारे हाथों में कैसा अनमोल खज़ाना सौंपा गया है! अब सवाल हमारे सामने आता है – हम इस विरासत के साथ क्या करें?

आइए, हम पहले से कहीं अधिक प्रतिबद्ध हों। आइए, हम अपने आध्यात्मिक गुरुदेवों को और अधिक प्रसन्न व हर्षित करें। दिव्य लोक से जब वे हमें यहाँ नीचे देखें तो हमें एकजुट देखकर, एक-दूसरे से प्रेम और सम्मान करते देखकर, जिस लक्ष्य व उद्देश्य के लिए उन्होंने अपना जीवन जिया वैसा ही हमें करते देखकर वे आनंदित हो जाएँ।

इस पैतृक सम्पदा को सँजोने और समृद्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि हमारा व्यवहार, सोच एवं कर्म उनके मानकों के अनुरूप हों। ईश्वर करे इस मार्ग से जुड़े हर परिवार में सद्‌भाव हो। ईश्वर करे हर केंद्र में जहाँ साधक एकत्र हों, वहाँ सामंजस्य हो। ईश्वर करे कि कभी-कभी आध्यात्मिक समुदायों में जो छोटे-छोटे मतभेद आ जाते हैं वे इस बसंत के सूर्य के ताप में विलीन हो जाएँ। हमें यह याद रहे कि हम सभी उसी आध्यात्मिक वंश की संतानें हैं, उसी समान प्राणाहुति के प्राप्तकर्ता हैं और सभी उसी गंतव्य की ओर अग्रसर हैं।

यदि लालाजी अपने शिष्य को उन्नत होते देखने की प्रसन्नता के लिए अपनी महानतम खोज अर्पित कर सकते थे और यदि बाबूजी ऐसा प्रेम कर सकते थे जो राधा के प्रेम से भी बढ़कर था तो निःसंदेह हम भी अपने समीप खड़े भाई-बहनों की ओर मित्रता का हाथ बढ़ा सकते हैं, छोटी-छोटी कड़वाहटों को छोड़

आइए, हम पहले से कहीं अधिक प्रतिबद्ध हों। आइए, हम अपने आध्यात्मिक गुरुदेवों को और अधिक प्रसन्न व हर्षित करें। दिव्य लोक से जब वे हमें यहाँ नीचे देखें तो हमें एकजुट देखकर, एक-दूसरे से प्रेम और सम्मान करते देखकर, जिस लक्ष्य व उद्देश्य के लिए उन्होंने अपना जीवन जिया वैसा ही हमें करते देखकर वे आनंदित हो जाएँ।

सकते हैं और उन आशीर्वादों के योग्य पात्र बन सकते हैं जो हमारे भीतर उँडेले गए हैं।

अतः, ईश्वर करे हमारे गुरुदेवों का प्रेम आपके हृदय को स्पर्श करे, उनकी प्राणाहुति से आपका अस्तित्व परिवर्तित हो और आप अपने तरीके से उनकी विरासत का जीता-जागता प्रमाण बनें।

स्नेह और प्रार्थनासहित,

कमलेश

बसंत पंचमी, 23 जनवरी 2026

पूज्य श्री लालाजी महाराज के 153वें जन्मोत्सव
के अवसर पर 22, 23 और 24 जनवरी 2026 को
कान्हा शान्तिवनम् में दिया गया संदेश।

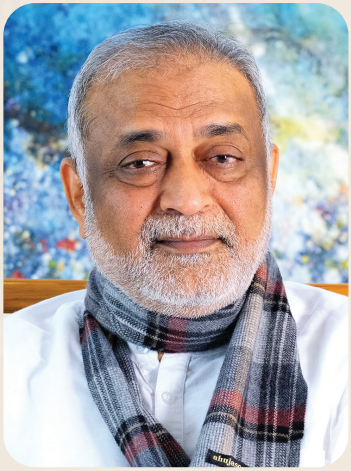

दाजी के साथ मास्टरक्लास

आप किसी भी समय हार्टफुलनेस ध्यान का आरम्भ कर सकते हैं। दाजी के साथ तीन भागों की मास्टरक्लास श्रृंखला से जुड़ें जिसमें वे हार्टफुलनेस मार्ग के लाभ को साझा करते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि हार्टफुलनेस रिलैक्सेशन, ध्यान, सफ़ाई और प्रार्थना को अपनी दैनिक जीवनचर्या में कैसे समाहित किया जाए। सभी मास्टरक्लास पूर्णतः निःशुल्क हैं।

https://heartfulness.org/global/masterclass/

हार्टफुलनेस अभ्यास

हार्टफुलनेस के अभ्यासों को जानें -रिलैक्सेशन, ध्यान, सफ़ाई और प्रार्थना करना सीखें।

https://heartfulness.org/in-en/heartfulness-practices/

heartfulness

purity weaves destiny